THE HINDU

Date:13-03-23

Reimagining the urban-rural dichotomy

The rural-urban continuum has drawn wide attention in recent years

Srikumar Chattopadhyay, (geographer, was with the Centre for Earth Science Studies and is now with the Gulati Institute of Finance and Taxation, Thiruvananthapuram)

The traditional dichotomy of rural and urban, and the accordingly mandated governance structure, seems inadequate to understand and act upon poverty, undernourishment, education, health, environmental management or even development. For, between the two extremes lies an intermediate settlement formation where rural and urban functions coexist without distinguishable boundaries. Such formations evolve due to interactions of a complex set of geographical, cultural, economic and historical processes. The rural-urban continuum or urban-rural continuum has drawn wide attention in recent years. Under this axiom, it is acknowledged that the transition from rural to urban follows a graded curve of development, and opportunities for social and economic development depend on one's location along this curve.

Nuanced perspectives

A 2021 World Bank Policy Research Working Paper, 'Economic and social development along the urban-rural continuum-New opportunities to inform policy,' advocated adopting the notion of urban catchment areas delienated along an urban-rural continuum. Identification of such areas would help understand urban-rural interconnections, which is important for making policy decisions across development sectors and for addressing issues related to environment and natural resources management. This would support geographically nuanced perspectives in development, required to address increasing spatial inequality.

A 2008 report of the Desakota Study Team, 'Re-imagining the Rural Urban Continuum,' was based on studies in eight countries around the world including India. It stressed on understanding the changing relationship between ecosystems and livelihoods under diversified economic systems across the rural-urban continuum as this has important policy implications at all levels. The term Desakota is an Indonesian usage to designate the formation of rural-urban continuum.

In India, Kerala is well known for the rural-urban continuum in the coastal plain. This was noted even by Moroccan traveller Ibn Batuta in the 14th century. The trend further spread over the lowlands and adjoining midlands and highlands. Geographical factors supported by affirmative public policy promoting distributive justice and decentralisation have increased rural-urban linkages and reduced rural-urban differences in major parts of Kerala. In recent years, the rural-urban continuum has developed in various parts of the country, although the underlying factors propping them up are different from those noted in Kerala. The urban industrial interaction fields in India are spreading by linking rural areas and also small towns around the mega cities and urban corridors penetrating rural hinterlands.

Collapsing barriers

In 30 years, technology and economic globalisation have increased mobility of resources and people, and enhanced inter- and intra-country connectivity. The extension of transport and communication systems, improved access to energy, increased affordability private and public transport as well as penetration of economic and other networks into remote areas promote a rural-urban continuum. The barriers due to physical distance is melting as increasing rural-urban linkages have given rise to diffused network regions. Rural hinterlands are connected to multiple urban centres. The movement of goods, people, information and finance between sites of production and consumption has strengthened linkages between production and labour markets. As the pull factors grow, push factors driving populations out from both rural areas and urban areas are also intensifying. In the process, a mixed economy zone of primary and secondary-tertiary sectors has evolved.

The rural-urban continuum areas also witness changing ecosystems. Agriculturally productive lands are being given for other uses. Food security zones are being reconfigured. Areas for pollutant filtering are declining. There is an increase in waste dump, enhanced disaster risk, and elevated vulnerability. The access of local people to water, food, fuel, fodder and fibre from ecosystems is reducing. At the same time, intermediary market institutions are emerging to provide these goods, which has significant implications for the local people. There is also escalation of market value of land, which further marginalises them.

Discussions on social and economic development and environmental issues and their inter-linkages are not complete without acknowledging the rural-urban continuum. Viewing social and economic transformation through this lens will help identify challenges for improving both urban and rural governance and opportunities for enhanced access to employment, services, institutional resources and environmental management. The institutional connections between rural and urban areas operate at different levels for various development sectors. The key challenge of decision-making is to build rural-urban partnership. To achieve this, a systems approach is recommended where the city and the surroundings form a city region for which a perspective plan is prepared integrating rural and urban plans within a common frame. The city and the rural areas will finally move towards a post-urban world where the rural-dichotomy will no longer exist. It is important that the rural urban linkages are better mapped, for which satellite-based settlement data and its integration with Census data may be useful.

जनसत्ता

Date:13-03-23

सहयोग का सफर

संपादकीय

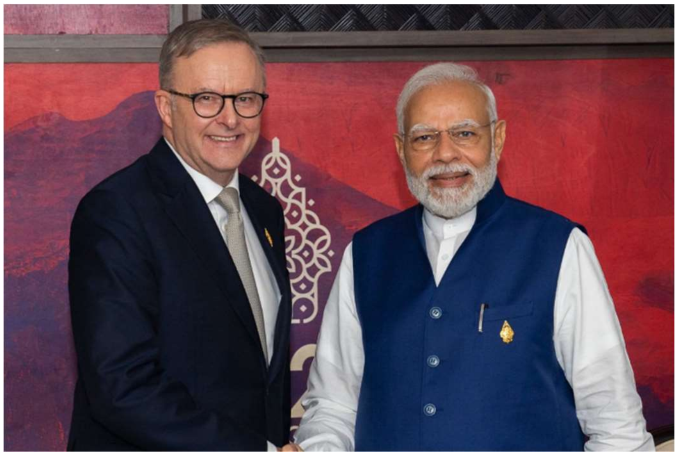

भारत और आस्ट्रेलिया के बीच कूटनीतिक संबंध पहले से ही सहज रहे हैं, लेकिन मौजूदा दौर में तेजी से बदलते वैश्विक परिदृश्य में दोनों देशों ने जैसे सरोकार दिखाए हैं, वे कई लिहाज से अहम हैं। चीन ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में जैसी दखल दी है और खासकर हिंद-प्रशांत क्षेत्र में उसके आक्रामक रुख के चलते पड़ोसी और सीमा से सटा देश होने के नाते भारत में जैसी चिंता पैदा की है, उसके मद्देनजर स्वाभाविक ही भारत को अपने हर मोर्चे पर मजबूत विकल्प खड़े करने के लिए अतिरिक्त प्रयास करने की जरूरत महसूस हो रही है। आर्थिक सहयोग और व्यापार समझौते को पूरा करने पर सहमति बनी आस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री एंथनी अल्बनीज की ताजा भारत यात्रा और इस दौरान आपसी सहयोग की दिशा में बढ़े कदम को इसी संदर्भ में देखा जा सकता है। गौरतलब है कि इस दौरान रक्षा संबंधों को प्रगाढ़ बनाने के साथ-साथ भारत और आस्ट्रेलिया के बीच व्यापक आर्थिक सहयोग और व्यापार समझौते को जल्द से जल्द पूरा करने पर सहमति बनी। उम्मीद जताई गई है कि इस साल के पूरा होते-होते समझौते को अंतिम स्वरूप दे दिया जाएगा।

दरअसल, पिछले साल ही भारत और आस्ट्रेलिया के बीच आर्थिक सहयोग और व्यापार समझौते पर हस्ताक्षर हुए थे और उसी को अब जमीनी स्तर पर उतारने के लिए तेजी से काम चल रहा है। आस्ट्रेलिया भारत को मुख्य रूप से कच्चे माल का निर्यात करता है, जबकि भारत से वह परिष्कृत वस्तुओं का आयात करता है। यही स्थिति दोनों देशों के लिए अनुकूल और फायदेमंद अवसरों का निर्माण करती है। इसी क्रम में द्विपक्षीय सुरक्षा सहयोग को दोनों देशों के बीच व्यापक रणनीतिक साझेदारी के एक महत्त्वपूर्ण स्तंभ के रूप में देखा गया है। पिछले कुछ सालों के दौरान रक्षा क्षेत्र में हुए उल्लेखनीय समझौते के तहत एक-दूसरे की सेनाओं के लिए साजो-सामान के समर्थन से लेकर सुरक्षा एजंसियों के बीच नियमित और उपयोगी सूचनाओं का आदान-प्रदान होता रहा है। अब उस तंत्र को और मजबूत करने पर बात बढ़ी है। आतंकवाद और आतंकी संगठनों के खिलाफ साझा और ठोस लड़ाई पर बनी सहमति को वक्त का तकाजा कहा जा सकता है। साथ ही दोनों पक्षों ने खेल, नवाचार, दृश्य-श्रव्य उत्पादन और सौर उर्जा के क्षेत्रों में आपसी सहयोग के लिए चार समझौतों पर हस्ताक्षर किए।

अल्बनीज की यात्रा के दौरान एक अहम बिंदु यह भी रहा कि भारत के प्रधानमंत्री ने उनके सामने आस्ट्रेलिया में पिछले दिनों कुछ मंदिरों पर हमलों को लेकर आपत्ति दर्ज कराई। जब दो देशों के बीच सहयोग का विस्तार होता है, तो उसमें सांस्कृतिक स्तर पर एक-दूसरे का खयाल रखना जरूरी पक्ष होता है। यही वजह है कि आस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्री ने कहा कि धार्मिक स्थलों पर हमलों के लिए जिम्मेदार किसी भी व्यक्ति को कानूनी सख्ती का सामना करना पड़ेगा। भारत और आस्ट्रेलिया अगर सुरक्षा सहित हर मोर्चे पर आपसी सहयोग के तंत्र को व्यापक बनाने की कोशिश कर रहे हैं तो इसका असर चीन की कूटनीति पर भी पड़ेगा। यह किसी से छिपा नहीं है कि चीन भारतीय सीमा में अक्सर नाहक दखल देता और जानबूझ कर विवाद पैदा करने की कोशिश करता रहा है। चीन शायद इसलिए भी ऐसा कर पाता है कि भारत का सहिष्णु और धीरज का रुख उसे अपनी मनमानी के अनुकूल लगता है। मगर सच यह है कि भारत ने इस मसले को हमेशा ही संवेदनशील माना है। अपने स्तर पर मोर्चे को मजबूत करने के अलावा अन्य देशों के साथ-साथ आस्ट्रेलिया से रणनीतिक साझेदारी को व्यापक स्वरूप देना इसी का हिस्सा है।

Date:13-03-23

मशीनी मेधा से पैदा होती चुनौतियां

संजीव राय

कृत्रिम मेधा यानी 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस' (AI) को लेकर चर्चा तेज हो गई है। जैसे-जैसे मानवीय जीवन की जटिलताएं बढ़ रही हैं, मनुष्य वैकल्पिक तरीकों से उनका समाधान निकालने का प्रयास कर रहा है। एक तरफ देश और दुनिया की बढ़ती आबादी है, जिसके लिए संसाधनों की चिंता करनी है, वहीं मनुष्य द्वारा किए जाने वाले कई काम अब कृत्रिम मेधा की मदद से किए जा रहे हैं। कृत्रिम मेधा युक्त मशीन वैसे ही काम कर रही है, जैसे मनुष्य करता है। निरंतर शोध का परिणाम है कि इस मशीन से गलती कम और काम की गति तेज हो रही है। विद्यार्थी के सीखने के तरीके के आधार पर उसको सहयोग देने, भाषा प्रसंस्करण करने, आनलाइन गेम खेलने से लेकर रोगों के उपचार, सर्जरी तक कृत्रिम मेधा की जरूरत पड़ रही है।

तकनीक के सहयोग से विद्यार्थियों को निर्देश और व्याख्यान दिए जा सकते हैं। कृत्रिम मेधा का उपयोग करके उत्तर कुंजी की मदद से परीक्षा का मूल्यांकन और आंकड़ों के जरिए छात्रों के परिणाम का विस्तृत विश्लेषण किया जा सकता है। यही नहीं, उत्तर पुस्तिका में जो गलती छात्रों से हुई है, कृत्रिम मेधा के सहयोग से उसे भी आसानी से रेखांकित किया जा सकता है। कृत्रिम मेधा की शुरुआत 1956 में जान मैकार्थी द्वारा की गई थी। इसके लिए कंप्यूटर द्वारा निर्मित रोबोटिक प्रणाली तैयार की जाती है, फिर उसे मानव मस्तिष्क के आधार पर साफ्टवेयर की मदद से प्रोग्रामिंग करके सोचने-समझने और चलाने का प्रयास किया जाता है।

कृत्रिम मेधा विश्लेषण करती है कि मानव मस्तिष्क कैसे सोचता, समझता और सीखता है, फिर उस विश्लेषण के आधार पर अपना 'अल्गोरिद्म' बनाती और काम करती है। ऐसे ही यह विद्यार्थियों के कौशल और दक्षता का मूल्यांकन करके उन्हें उच्च दक्षता के लिए निर्देशित कर सकती है। कुछ कंपनियां कृत्रिम मेधा का उपयोग करके अलग-अलग उम्र के बच्चे के लिए रुचिकर गणित-भाषा के लिए आनलाइन और वीडियो गेम बना रही हैं। भाषा के व्याकरण, शब्द और वाक्य विन्यास जैसी अशुद्धियों को ठीक कर रही हैं। इस तरह के ऐप आने से भाषा-संपादन के लिए दूसरों पर निर्भरता कम होती जा रही है।

अस्सी के दशक से पांचवीं पीढ़ी का कंप्यूटर बनाने की परियोजना शुरू हुई और फिर सुपर कंप्यूटर बनने लगे। 1997 आते-आते ऐसे सुपर कंप्यूटर बन गए, जिनका मस्तिष्क सामान्य मनुष्य से तेज चलने लगा। 'डीप ब्लू' नामक आइबीएम के कंप्यूटर का दिमाग इतना तेज हो गया कि उसने शतरंज के एक मशहूर खिलाड़ी को हरा दिया था। उसकी सफलता ने ऐसे कंप्यूटर बनाने का रास्ता खोला, जो कठिन गणितीय गणना, वित्तीय माडलिंग, बाजारों का रुझान, गंभीर खतरों का

विश्लेषण आदि कर सकें। 'डीप ब्लू' के बाद की पीढ़ी के 'वाटसन' नामक कंप्यूटर ने फरवरी, 2011 में कृत्रिम मेधा के सहयोग से शतरंज के दो मशहूर खिलाड़ियों को लाखों लोगों के सामने हरा दिया।

आज हर जरूरत के अनुसार अलग-अलग तरह के कृत्रिम मेधा के माडल तैयार हैं- कुछ पूर्णत: प्रतिक्रियात्मक हैं, तो कुछ की स्मृति सीमित है। मगर जिस तरह से विकसित और विकासशील देशों में शोध जारी हैं, आने वाले दिनों में मनुष्य के मस्तिष्क को सबसे बड़ी चुनौती कृत्रिम मेधा के माडल से मिलने वाली है। नए दौर के माडल मस्तिष्क सिद्धांत और आत्म-चेतन के आधार पर कार्य करेंगे। इसकी झलक 'चैट बोट' के कई विकल्पों से मिलती है। इसके कुछ प्रमुख उदहारण, अलेक्सा, गूगल का अस्सिटेंस होम, एप्पल का सीरी आदि हैं। ये सभी 'चैट बोट', मशीनी प्रशिक्षण और आपके दिशा-निर्देश पर काम करते हैं। 'चैट बोट' दो तरह के होते हैं। एक, जो मौखिक निर्देश पर काम करते हैं और दूसरे, लिखित निर्देशन पर काम करते हैं।

इन दिनों 'चैट जीपीटी' बहुत चर्चा में है। एक तरह का 'कंप्यूटर साफ्टवेयर लैंग्वेज माडल' है, जो 'की-इनपुट कमांड' के आधार पर जानकारी देता है। कुछ दिनों पहले इसे जारी किया गया और देखते-देखते इसकी लोकप्रियता दुनिया भर में फैल गई। आपको कोई चिट्ठी बनानी है, कोई छोटा लेख लिखना है, कोई प्रस्ताव बनाना है, यह सब काम 'चैट जीपीटी' दस मिनट में कर देगा! इसके आने से ऐसी आशंका है कि लाखों लोगों की नौकरी चली जाएगी। इससे शोध कार्य और 'कापी राइट' भी प्रभावित होने वाले हैं। मान लीजिए, किसी छात्र को पर्यावरण पर एक लेख लिखना है और वह 'चैट जीपीटी' की मदद से वह लेख लिख दे, तो उस लेख का वास्तविक लेखक कौन हुआ, 'चैट जीपीटी', वह छात्र या 'चैट जीपीटी' ने जहां से सामग्री ली? मगर अभी यह जानना एक समस्या है कि 'चैट जीपीटी' कहां से सामग्री ले रहा है और वह जानकारी कितनी तथ्यपरक है?

कृत्रिम मेधा की मदद से चौबीस घंटे काम करने वाली एक मशीन मिल जाएगी। वह स्वचालित तरीके से काम करेगी और गलतियां भी कम करेगी। मगर सवाल है कि क्या यह मशीन मानवीय रचनात्मकता का मुकाबला कर पाएगी? स्कूल-कालेज-विश्वविद्यालयों के अनेक प्रशासनिक कार्य, कक्षा में हाजिरी लेना आदि कृत्रिम मेधा की मदद से होगा, लेकिन शिक्षण के लिए एक 'हाइब्रिड माडल' के उभरने की संभावना है। मैथ्यू लिंच शिक्षा में कृत्रिम मेधा की बहुत संभावना देखते हैं। वे शिक्षक की पाठ योजना से लेकर भाषा सीखने, परीक्षा की तैयारी और छात्रों-अभिभावकों के साथ संवाद, व्यावसायिक प्रशिक्षण और मानव संसाधन के व्यवस्थापन आदि में इसकी उपयोगिता देखते हैं।

उच्च शिक्षा में कृत्रिम मेधा आजकल शोध कार्य में अकादमिक चोरी रोकने के लिए प्रयुक्त होती है। शोध छात्र को शोध प्रबंध के मौलिक होने का एक प्रमाणपत्र लेना होता है, तभी वह विश्वविद्यालय में अपना शोधकार्य प्रस्तुत कर पाता है। कुछ साफ्टवेयर, शोधकार्य में किसी दूसरे से ली गई एक-एक लाइन को पकड़ लेते हैं। मगर अब 'चैट जीपीटी' को शोध में अकादमिक लेखन के लिए उपयोगी भी माना जा रहा है, क्योंकि इसके सहयोग से सामग्री का अनुवाद, लंबे लेख को संक्षेप में लिखने आदि में मदद मिल रही है। मगर इसकी सीमा यह है कि यह मौलिक विचार नहीं प्रस्तुत कर सकता। यह उपलब्ध सामग्री ही प्रस्तुत करता है और वह भी बिना संदर्भ के। इस तरह इसमें किसी और की सामग्री का इस्तेमाल होने और कभी पक्षपातपूर्ण रवैए का खतरा भी है।

भारत सरकार ने कृत्रिम मेधा के महत्त्व को पहचानते हुए शैक्षणिक संस्थानों में उत्कृष्टता केंद्र बनाने का निर्णय किया है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान हैदराबाद और कुछ अन्य संस्थान अब कृत्रिम मेधा में स्नातक कार्यक्रम चला रहे हैं। ऐसी

संभावना है कि आने वाले दिनों में 'चैटबोट', 'रोबोटिक्स', 'मशीन लर्निंग' न सिर्फ शिक्षा और शिक्षक प्रशिक्षण में शामिल हो जाएंगे, बल्कि इनके अपने काम के मूल्यांकन की एक पद्धति भी विकसित हो जाएगी। इसके बढ़ते प्रभाव से अकादमिक कार्यों की गुणवत्ता कैसी होगी, यह तो आने वाले वक्त में पता चलेगा।

दुनिया भर में कृत्रिम मेधा, 'रोबोटिक्स', 'डिजिटल मैन्युफैक्चरिंग', 'बिग डाटा इंटेलिजेंस', 'रियल टाइम डाटा' और 'क्वांटम कम्युनिकेशन' के क्षेत्र में शोध, प्रशिक्षण, मानव संसाधन और कौशल विकास का कार्य बढ़ता जा रहा है। बहुत सारी कंपनियां इनका उपयोग व्यापारिक हित में कर रही हैं। कृत्रिम मेधा अब कई अरब डालर का उद्योग बन गया है। मगर इसमें व्यक्ति से लेकर राष्ट्र तक की गोपनीयता भंग होने का खतरा भी है, जिसमें सुरक्षित डेटा रखना एक चिंता की बात है। कुछ लोग मानते हैं कि कृत्रिम मेधा पर अत्यधिक निर्भरता मनुष्य की निजता और गरिमा के लिए खतरा हो सकता है। मगर यह तो तय है कि कृत्रिम मेधा हमारे रहन-सहन, काम करने, पढ़ने-पढ़ाने, शोध के तरीकों में व्यापक बदलाव लाने वाली है।

राष्ट्रीय सहारा

Date:13-03-23

सुधार की तेज होती पहल

जयसिंह रावत

सर्वोच्च अदालत की पांच सदस्यीय संविधान पीठ ने आखिरकार, निर्वाचन आयोग की निष्पक्षता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति की सरकारी व्यवस्था को बदलने का ऐतिहासिक फैसला ले ही लिया। मौजूदा व्यवस्था की खामियों के कारण आयोग की निष्पक्षता पर तो सवाल उठते ही रहे साथ ही इसकी विश्वसनीयता भी सवालों के घेरे में रही। आज हालत यह है कि आयोग निष्पक्षता से फैसले लेता भी है, तो उस पर उंगली उठ ही जाती है क्योंकि सरकारी नियंत्रण और सत्ताधारी दलों की कारगुजारियों पर से नजर फेर देने की मजबूरी के कारण उसकी विश्वसनीयता का ह्रास होता गया है।

आज हमारे सामने विश्व की जो लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था है, वह हजारों सालों के अनुभवों का फल होने के साथ ही मानव सभ्यता का बेहतरीन पड़ाव भी है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, इसलिए बेहतरीन लोकतांत्रिक शासन की मिसाल पेश करने की जिम्मेदारी भी भारत की ही है। लेकिन सत्ता की हवस हर हाल में अपने पक्ष में व्यवस्थाएं चाहती है। इसीलिए अब तक निर्वाचन आयोग सरकार के नियंत्रण से मुक्त नहीं हो पाया। वास्तव में जब तक निर्वाचन आयोग में सुधार नहीं आता तब तक राजनीतिक भ्रष्टाचार से मुक्ति नहीं मिल सकती। देखा जाए तो भ्रष्टाचार की गंगोत्री चुनाव से ही बहनी शुरू होती है। मसलन, कौन नहीं जानता कि बिना धन-बल चुनाव जीतना नामुमकिन है। देश में भ्रष्टाचार और अनाचार की यही असली जड़ है। निर्वाचन आयोग विपक्ष के उम्मीदवारों पर नजर तो रखता है मगर

सत्ताधारियों पर उसकी नजर नहीं पड़ती। जो लोग अनुचित तरीकों से सत्ता में आएंगे, उनसे सदाचार की अपेक्षा कैसे की जा सकती है।

अगर सरकारें स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव चाहती हैं, तो स्वतंत्र निर्वाचन आयोग से डर क्यों? जब सीबीआई के निदेशक की नियुक्ति एक कमेटी द्वारा कराई जा सकती है, तो फिर निर्वाचन आयोग के सदस्यों की नियुक्ति निष्पक्ष एवं स्वतंत्र व्यवस्था के तहत क्यों नहीं? सीबीआई सरकारी विभाग है, कोई संवैधानिक संस्था नहीं। उसके निदेशक के चयन के लिए नई व्यवस्था इसलिए की गई ताकि वह स्वतंत्र एवं निष्पक्ष होकर कर दूध का दूध और पानी का पानी कर सके। जब सीबीआई की निष्पक्षता के लिए प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में प्रतिपक्ष के नेता और प्रधान न्यायाधीश या उनके द्वारा नामित एक जज की कमेटी की आवश्यकता महसूस की गई तो निर्वाचन आयोग के सदस्यों के लिए ऐसी ही कमेटी क्यों नहीं। सीबीआई ही नहीं, मुख्य सतर्कता आयोग, मुख्य सतर्कता आयुक्त, राज्यों के सूचना आयोगों के सदस्यों और राज्यों के लोकायुक्तों और केंद्र के लोकपाल के गठन के लिए भी स्वतंत्र कमेटी के गठन की व्यवस्था है। लोकतंत्र की मजबूती और उसके लिए चुनाव व्यवस्था की शुचिता के लिए चुनाव सुधार हेतु कमेटियों का गठन होता रहा है, और समितियों की सिफारिशों पर महत्वपूर्ण निर्णय भी लिए जाते रहे हैं। जैसे मतदाताओं की न्यूनतम उम्र सीमा 18 वर्ष करना, फोटो पहचान पत्र की व्यवस्था, ईवीएम मशीनों का चलन, मतदान से पहले चुनावी सर्वेक्षणों पर रोक और नोटा की शुरुआत आदि कई नई व्यवस्थाएं शुरू हुईं मगर चुनाव आयोग को निष्पक्ष और सरकार के नियंत्रण से मुक्त करने की दिशा में प्रयास नहीं हुए।

चुनाव सुधार की दिशा में सबसे पहले 1990 में दिनेश गोस्वामी कमेटी का गठन हुआ। समिति ने सिफारिश की थी कि राजनीतिक दलों को चुनाव आयोग के साथ पंजीकरण कराना चाहिए और अपने धन के स्रोतों का खुलासा करना चाहिए। यह भी सिफारिश की कि चुनावों में धन और बाहुबल के इस्तेमाल पर रोक लगाई जानी चाहिए। गोस्वामी समिति के बाद 1998 में इंद्रजीत गुप्त समिति ने सिफारिश की कि स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए चुनाव आयोग के पास अधिक शक्तियां होनी चाहिए। यह भी सिफारिश की कि राजनीतिक दलों को अपने वार्षिक लेखा परीक्षित खातों को चुनाव आयोग को प्रस्तुत करने की आवश्यकता होनी चाहिए।

इसके बाद 2001 में संविधान के कामकाज की समीक्षा के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग ने सिफारिश की कि लोक सभा और राज्य विधानसभाओं के चुनावों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली शुरू हो। 2015 में विधि आयोग ने चुनाव में धन और बल के इस्तेमाल को आपराधिक कृत्य मानने की सिफारिश की। उसके बाद 2017 में एक विशेषज्ञ कमेटी ने ईवीएम के साथ वीवीपैट की व्यवस्था की सिफारिश की। मगर अब तक निर्वाचन आयोग को सरकार के चंगुल से मुक्त करने की बात किसी ने नहीं की। मुख्य निर्वाचन आयुक्त समेत सभी सदस्यों की नियुक्ति केंद्र सरकार अपनी सुविधानुसार करती है, लेकिन अब सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के बाद प्रधानमंत्री, लोक सभा प्रतिपक्ष के नेता और सुप्रीम कोर्ट के प्रधान न्यायाधीश की कमेटी आयोग के सदस्यों का चयन करेगी।